चतुर्थ अध्याय

रामधारी सिंह दिनकर का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

(क)व्यक्तितत्व

- जन्म
- पारिवारिक जीवन
- बाल्यकाल एवं विद्यार्थी जीवन
- स्वतंत्रता संघर्ष में योगदान
- व्यवसाय
- सम्मान
- समग्र व्यक्तितत्व का मूल्यांकन

(ख) कृतित्व

- काव्य रचना
- गद्य रचना

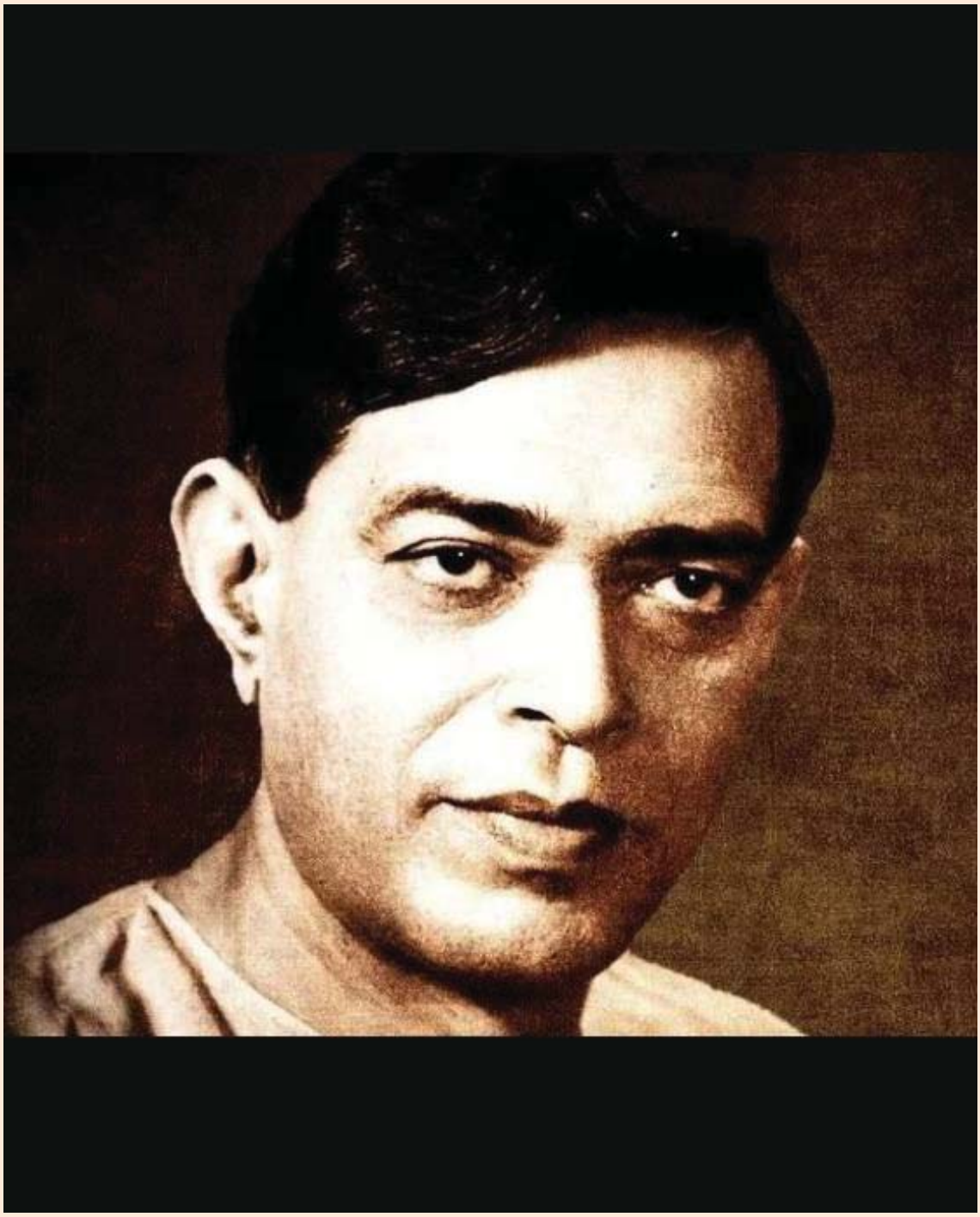

रामधारी सिंह दिनकर

30 सितंबर 1908 ई.-23 अप्रैल 1974 ई.

चतुर्थ अध्याय

अ. व्यक्तित्त्व

विश्वविख्यात राष्ट्रीय कवि रामधारी सिंह 'दिनकर' जी एक प्रसिद्ध ओजस्वी कवि, लेखक, निबंधकार, साहित्यकार, पत्रकार और दार्शनिक थे। वर्तमान शताब्दी में हिंदी साहित्य जगत में कई महान कवि हुए परंतु दिनकर को उनकी हिंदी साहित्य जगत की देन को देखते हुए, मैथिलीशरण गुप्त के बाद राष्ट्र कवि के रूप में दूसरा स्थान प्राप्त है। उनकी कविताएं राष्ट्रीय भावनाओं से भरी हुई है, जिसे वह अपनी स्वाभाविक ओजस्विता के साथ व्यक्त करते हैं। दिनकर अपनी रचनाओं के माध्यम से भारतीय जनमानस में नई उमंग पैदा करने वाले युगपुरुष थे। दिनकर जी ने गोरी हुकूमत की मानसिकता को लेकर चल रहे, अफसर तंत्र और नेताओं को अपने अंदाज में चेतावनी दी। वर्ष 2008 में भारत के प्रधानमंत्री 'डॉ. मनमोहन सिंह' ने भारत की संसद भवन में दिनकर की तस्वीर लगाकर उन्हें सम्मानित किया था। दिनकर मुख्यतः राष्ट्रकवि के साथ-साथ विद्रोही कवि के रूप में भी जाने जाते हैं।

- **जन्म**

दिनकर जी से संबंधित सामग्री का जब मैंने अध्ययन किया, तो पाया कि उनकी जन्मतिथि में संशय है, जो कि इस प्रकार है,

'मन्मथनाथ गुप्त' ने "तिथि 1960 ई. के 30 सितंबर"[1] 'डॉ. अनुपमा' ने अपनी कृति 'दिनकर के काव्य में सांस्कृतिक चेतना' में "30 सितंबर 1908"[2] माना है। वहीं उर्वशी के समीक्षक एवं व्याख्याकार 'डॉ. कृष्ण देव शर्मा' एवं 'डॉ. माया अग्रवाल' "29 सितंबर सन 1908"[3] मानते हैं। 'डॉ. यतीन्द्र तिवारी' अपने शोध प्रबंध में दिनकर की जन्म तिथि "23 सितंबर, सन 1908"[4] तथा 'डॉ शेखर चंद्र जैन' "30 सितंबर 1908ई."[5] मानते हैं वहीं एक अन्य लेखक 'डॉ. गिरीश चंद्र' अपनी कृति में दिनकर की जन्म तिथि को लेकर कोई पूर्ण मत न देकर "23 या 30 सितंबर 1908"[6] को दिनकर जी की जन्म तिथि बताते हैं।

अतः उपरोक्त मतों को ध्यान में रखते हुए, मैंने यह पाया कि इनकी जन्मतिथि में भ्रांतियां है। परंतु सभी ने सन 1908 ई. ही माना है। इसलिए अधिकांश लेखकों की सहमति 30 सितंबर को ही मैंने दिनकर जी की जन्म तिथि स्वीकार किया है। परंतु यह तब और प्रमाणित हो जाता है। जब "उनकी माता जी के कथनानुसार उनका जन्म फसली सन के १३१६ साल में आश्विन, शुक्ल पक्ष में बुधवार की रात को लगभग बारह बजे हुआ था, तथा उनकी छठी विजयादशमी को मनाई गई थी। ज्योतिष गणना के अनुसार यह तिथि 30 सितंबर, सन 1908 को ही पड़ती है।"[7]

दिनकर जी का जन्म स्थल बिहार प्रदेश के मुंगेर में स्थित सिमरिया गांव है। उनके पिता रवि सिंह थे, जो एक उत्तम कुल के कृषक थे। उनकी माता का नाम श्रीमती मनरूप देवी था। दिनकर तीन भाई थे। ये मझले थे। इनके ज्येष्ठ भाई का नाम बसंत सिंह और छोटे भाई का नाम सत्यनारायण सिंह था। दिनकर के पिता का जब देहांत हुआ तब वे केवल 2 वर्ष के थे। इनके पिता के देहांत के बाद इनका दुर्भाग्य आगे चलकर आशीर्वाद का रूप धारण करता है। वैसे इनका मूल नाम रामधारी सिंह था। परंतु पिता के प्रति अगाध प्रेम के कारण इन्होंने अपना उपनाम 'दिनकर' रखा। जिसका अन्य कारण यह था, कि उनके पिता के नाम और उपनाम दोनों का अर्थ एक ही था- सूर्य। इसके उपरांत दिनकर को साहित्य के क्षेत्र में रामधारी सिंह 'दिनकर' जी के नाम से जाना जाने लगा। पिता के जाने के बाद पूरे परिवार का दायित्व विधवा मां पर आ गया। उनके तीनों बेटों के पालन-पोषण और उनकी शिक्षा की जिम्मेदारी को निभाने के लिए उन्होंने संपत्ति का विक्रय कर दिया। मां का यही व्यक्तित्त्व कवि के अंतर्मन में बस गया। मां के प्रति इस आस्था ने दिनकर को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित किया। दिनकर जी का विवाह किशोरावस्था में ही श्यामा जी के साथ हो गया था। दिनकर जी को 'दिनकर' बनाने के लिए मां के साथ-साथ पत्नी का भी बड़ा योगदान रहा। वह कर्मठ, विदुषी, उदार, सहज, दयालु, त्यागमयी और आदर्श भारतीय महिला थीं। वह संयुक्त परिवार में सभी कामकाज करतीं और

जरूरत पड़ने पर अपने गहने तक न्यौछावर कर देती थीं। "अपने गौरांग को उन्होंने सीमाओं में बांधकर नहीं रखा प्रत्युत 'विष्णु-प्रिया' बनकर परिवार की सेवा-सुश्रूषा और श्रम को ही जीवन का साध्य बना लिया और फिर जब प्रतिष्ठा और कीर्ति ने उर्वशी के चरण चूमे, यह 'औशीनरी' तपस्या, त्याग और साधना की ही मूर्ति बनी रही।"[8] दिनकर जी 'रसवंती' में अपने गृहस्थ जीवन की अभिव्यक्ति अत्यंत हृदयस्पर्शी भावों में इस प्रकार करते हैं, वे कहते हैं-

"तुम सखि, इंद्रपुरी के तन में सावित्री का मन लाई
ताप-तप्त मरू में मेरे हित शीत-स्निग्ध जीवन लाई
जीवन के दिन चार, अवधि इससे भी अल्प जवानी की"[9]

दिनकर की पत्नी श्यामा सच्चे अर्थों में एक ऐसी अर्धांगिनी थीं, जो सूझबूझ के साथ अपने कर्तव्य का निर्वाह करती रहीं।

- **पारिवारिक जीवन**

दिनकर के परिवार में रामायण, गीता, पुराण, महाभारत आदि धार्मिक ग्रंथों को महत्व दिया जाता था, इसलिए उन्हें बचपन से रामचरितमानस, रामलीला, नाटक आदि में रुचि थी। इनके परिवार में स्वर्गीय पिता रामसेवक सिंह के बाद दिनकर की माता मनरूप देवी तथा दिनकर के ज्येष्ठ भाई बसंत सिंह तथा अनुज भाई सत्य नारायण सिंह रह गए थे। 1921 ई. में दिनकर के विवाह के पश्चात उनकी धर्मपत्नी

श्यामा देवी इस परिवार में शामिल हो गयीं। दिनकर के दो पुत्र और पुत्री हुए। “19 वर्ष की अवस्था में दिनकर के प्रथम पुत्र रामसेवक सिंह का जन्म हुआ। 1934 ई. में पुत्री विनीता तथा 1936 ई. में छोटे पुत्र केदारनाथ सिंह का जन्म हुआ। छोटी पुत्री विभा के प्रति भी कवि ने अपने दायित्व का निर्वाह कर दिया है। इस प्रकार दिनकर स्वयं एक सपूत है, आदर्श पिता, विश्रुत पति, एक कुशल गृहस्थ के रूप में उसका वैयक्तिक जीवन समृद्ध एवं फलता-फूलता प्रतीत होता है।”[10]

किशोरावस्था में ही दिनकर जी का विवाह हो गया था। उनकी पत्नी ने वैवाहिक जीवन निर्वाह करने के बजाय उनके अध्ययन-अध्यापन में सहयोग करने तथा उनके संयुक्त परिवार की समस्त उत्तरदायित्वों का निर्वाह करने में अपना सर्वस्व दिनकर के नाम न्यौछावर कर दिया। वहीं जब बालक रामधारी सिंह मात्र दो वर्ष के थे, तभी उनके पिता का स्वर्गवास हो गया। उसके बाद जब भाइयों की शिक्षा-दीक्षा की बात आयी तो दिनकर जी के भाइयों ने अपने भाई को पढ़ा-लिखा कर बड़ा बनाने का सोचा और स्वयं खेती- बाड़ी की तरफ ध्यान देने का निर्णय किया अतः यह स्वाभाविक ही था कि रामधारी सिंह ‘दिनकर’ जी का अपने परिवार एवं गृहस्थी के प्रति अत्याधिक मोह रहा। दिनकर के गृहस्थ जीवन में दर्दनाक समय तब आया। जब उनके ज्येष्ठ पुत्र रामसेवक की असमय मृत्यु हुई। रामसेवक के एक पुत्र और चार पुत्रियां थी। उनका

दायित्व भी दिनकर जी के ऊपर आ गया। पैंसठ वर्ष की उम्र में उन्होंने अपनी दो पुत्रियों, छह भतीजियों और दो पौत्रियों का विवाह संपन्न करवाया।

हम कह सकते हैं कि दिनकर जी को प्रारंभ से ही पारिवारिक संघर्षों से जूझना पड़ा और पुत्र की असमय मृत्यु से वे टूट भी चुके थे। उन्हें गहरा आघात पहुंचा। इस कारण वे अपने जीवन के अंतिम दिनों में सुखी, निश्चिंत और निरोगी नहीं रह सके। अपना संयुक्त-समृद्ध परिवार होते हुए भी वह अपनी मृत्यु (24 अप्रैल 1974 ई.) से एक-डेढ़ वर्ष पहले संन्यास लेने की बात करते थे।

- **बाल्यकाल एवं विद्यार्थी जीवन**

दिनकर जी का जन्म स्थल सिमरिया घाट दो नदियों से घिरा हुआ है, जो मिथिला भूमि का तीर्थ स्थान होने के साथ-साथ गंगा की लहरों की तरह शीतल भी है। अपनी जन्म भूमि का वर्णन कवि 'रेणुका' में इस प्रकार करते हैं-

"हे जन्मभूमि ! शत बार धन्य !
तुझ-सा न 'सिमरिया घाट' अन्य ।
तेरे खेतों की छवि महान,
अनिमंत्रित आ उर में अजान,
भावुकता बन लहराती है,

फिर उमड़ गीत बन जाती है

'बाया' की यह कृश विमल धार,

गंगा की यह दुर्गम कछार,

फूलों पर कास-परी फूली,

दो-दो नदियां तुझ पर भूली।

कल कल कर प्यार जताती है,

छू पाशर्व सरकती जाती।"[11]

इनकी शिक्षा का प्रारंभ संस्कृत विद्वान के अधीन हुआ। दिनकर जी ने प्राइमरी की शिक्षा गांव के पाठशाला से उत्तीर्ण की। परिवार में गरीबी थी और दिनकर जी पढ़ना चाहते थे। उनके दोनों भाइयों ने तय किया कि वे अपनी पढ़ाई छोड़ देंगे और दिनकर को पढ़ाएंगे अतः उन दोनों भाइयों को कोई आपत्ति नहीं हुई। इनके दोनों भाइयों की सोच थी कि नुनू (दिनकर) पढ़ लिखकर हकीम बनने के लिए ही पैदा हुआ है । ऐसा सुंदर सुकुमार व्यक्ति न खेत में काम कर पाएगा न धूप-वर्षा झेल पाएगा। इसलिए उन्होंने स्वयं खेती कर दिनकर जी को पढ़ाना चाहा। दोनों भाइयों ने खेती का काम संभालना शुरू कर दिया। भाइयों के इसी प्यार और बलिदान को देखते हुए, दिनकर जी ने पूरे परिवार का दायित्व अपने ऊपर ले लिया।

प्राइमरी की शिक्षा गांव की पाठशाला से पास की। यह वह समय था, जब महात्मा गांधी की अपील पर असहयोग आंदोलन जोर पकड़ रहा था। अंग्रेजों की तरफ से चलाए जा रहे स्कूलों से लोगों ने अपने बच्चों के नाम कटवाने शुरू कर दिए। आजादी के लिए आंदोलन चलाने के लिए हर गांव हर कस्बों में राष्ट्रीय स्कूल खोल दिए गए और लोग उन स्कूलों में अपने बच्चों के दाखिले के लिए उमड़ पड़े। दिनकर जी के बाल मन पर इसका गहरा प्रभाव पड़ा। बारो नामक राष्ट्रीय पाठशाला में उनका दाखिला हुआ, जो सिमरिया से 4 कि.मी. की दूरी पर था। इस पाठशाला का वातावरण राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत था। इस स्कूल में उर्दू की शिक्षा भी दी जाती थी। इस पाठशाला का खर्च भिक्षा मांगकर जुटाए गए अन्न व पैसों से चलता था। विद्यार्थियों में देश-प्रेम का भाव भरना ही इस राष्ट्रीय पाठशाला का उद्देश्य था। राष्ट्रीय पाठशाला के विद्यार्थी होने के नाते दिनकर सार्वजनिक सभाओं में राष्ट्रगीत 'वंदे मातरम' गाने जाया करते थे। 1922 ई. में असहयोग आंदोलन बंद होने के बाद यह पाठशाला भी बंद हो गई कहीं न कहीं इस पाठशाला का दिनकर जी पर यह प्रभाव पड़ा कि उनके व्यक्तित्त्व में जिन गुणों का बाल्यावस्था में ही समावेश हो गया था, वे थे- सांप्रदायिक एकता की भावना, ओजस्विता, राष्ट्रीयता जातीय सद्भावना, कर्मठता, उत्साह आदि। इन दो सालों में उन्होंने हिंदी के साथ उर्दू का भी अध्ययन किया। विद्यार्थियों में राष्ट्रीयता की समझ हो इसके लिए हिंदू-मुस्लिम एकता की व्यवहारिक शिक्षा पर भी बल दिया

गया। यहीं से दिनकर के अंतर्मन में राष्ट्रीयता के बीज अंकुरित होते हैं। गांवों से दूर 'मोकामाघाट' से इन्होंने मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की। 1928 ई. में मैट्रिक पास करने के बाद उनकी आगे की पढ़ाई जारी रही। उन्होंने पटना कॉलेज से इतिहास ऑनर्स से बी.ए. में चार वर्ष अध्ययन किया और उत्तीर्ण हुए। यह वह समय था, जब "बेनीपुरी जी ने एक युवक नामक पत्र निकालना प्रारंभ किया। जिसमें दिनकर जी की उग्रतापूर्ण रचनाएं 'अमिताभ' नाम से प्रकाशित होती थी।"[12]

दिनकर जी को मैट्रिक में प्रथम स्थान प्राप्त करने पर 'भूदेव हिंदी पदक' से सम्मानित किया। उसके एक वर्ष पश्चात ही उनका खंडकाव्य 'प्रणभंग' 1929 ई. में प्रकाशित हुआ था। जब वह मोकामाघाट स्कूल जाते थे। तब उन्हें स्कूल तक पैदल यात्रा करनी पड़ती थी। बीच में गंगा को पार करना, तपती धूप में नंगे पैर चलकर जाना पड़ता था। ऐसी विकट परिस्थितियों ने ही दिनकर जी को संघर्ष से लड़ना सिखाया। पटना कॉलेज में अध्ययन के दौरान ही उन्हें राहुल सांस्कृत्यायन, रामवृक्ष बेनीपुरी और गंगाशरण सिंह जैसे उच्च कोटि के साहित्यकारों के साथ संपर्क में आने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। कॉलेज के दिनों में घर में आर्थिक तंगी के कारण इच्छा होते हुए भी दिनकर आगे पढ़ नहीं सके। पूरे परिवार का दायित्व उनके कंधों पर आ गया था। यह सिलसिला सारी उम्र चलता रहा तभी एक जगह मन्मथनाथ जी कहते हैं- "नौकरी की

खटपट रोटी की चिंता भतीजियों और बेटियों के विवाह के लिए दर-दर की ठोकरें और हर रोज नए अभाव से संघर्ष यह वह वातावरण नहीं है जिसमें कवि का आंतरिक व्यक्तित्व खिल सकता हो। फिर भी दिनकर जी की प्राय: सभी कविताएं इसी वातावरण में लिखी गयीं। यदि आरंभ से ही जनता का प्यार उन्हें ना मिला होता, तो इस दमघोंटू वातावरण में उनका कवि जीवित रहता या नहीं इसमें काफी संदेह है ।"[13]

विद्यार्थी जीवन में दिनकर जी के बाल मन पर उनके जन्मस्थल का काफी प्रभाव पड़ा। वहां हर साल बाढ़ आती थी और जब वह पढ़ने के लिए जहाज में गंगा पार करके जाते थे, तो उस दौरान "उन्होंने गंगा को समुद्र के समान भयावह देखा। पेड़, छप्पर, आदमी और जानवरों, यहां तक कि कभी-कभी हाथी को भी निस्सहाय बहते देखा। इन सब दृश्यों ने दिनकर पर जीवन व्यापी प्रभाव डाला।"[14] गर्मियों में तो इससे भी विषम परिस्थिति होती। गर्म रेत पर चलना अत्यंत संवेदनीय और दुखद लगता था। सिमरिया गरीब किसानों का गांव था, ब्रिटिश साम्राज्य के दबदबे के कारण गरीबों का शोषण, अत्याचार व सामाजिक असमानता समाज में व्याप्त था।

सावित्री सिन्हा जी कहती हैं - "दिनकर की कविता में अत्याचार, अनाचार, शोषण और सामाजिक वैषम्य के प्रति जो विद्रोह का भाव व्यक्त हुआ उसकी प्रेरणा के बीज सिमरिया की शोषित, पीड़ित, निर्धन

जनता के प्रति उनकी प्रतिक्रियाओं में विद्यमान है। वहां के लोगों को भूख से बेहाल देखकर उनके नेत्र आंसुओं से और हृदय आक्रोश से भर जाता था ।"[15]

दिनकर जी ने अपना विद्यार्थी जीवन बड़ी ही सादगी से व्यतीत किया। गांव से दूर जाकर पढ़ना, रोजमर्रा का संघर्ष, आत्मनिर्भरता का अनुभव इन सभी घटनाओं ने उन्हें संवेदनशील और विद्यानुरागी बनाया। वे काव्य संस्कार से अपने विद्यार्थी जीवन में ही जागृत होने लगे थे। वे आगे पढ़ना चाहते थे, परंतु पढ़ नहीं सके। "दिनकर का स्वप्न था, कि वह भी उच्च शिक्षा के क्षेत्र में कम से कम एम.ए. के उपाधिधारकों में अपना नाम अवश्य लिखवा सके। किंतु पारिवारिक परिस्थितियों ने उनके समक्ष आर्थिक संकट उत्पन्न कर दिया और आजीविका अर्जन का दायित्व उनके कंधों पर आ गया। यद्यपि उनके परिवार के अभिन्न डॉ. काशी प्रसाद जायसवाल ने उन्हें आगे की शिक्षा ग्रहण करने के लिए आर्थिक रूप से सहायता भी देनी चाही, किंतु अपने परिवार की पुरातन परंपरा के संस्कारों और अपने स्वाभिमान के प्रति दृढ़ दिनकर ने डॉ. जायसवाल का सहयोग स्वीकार नहीं किया।"[16] इसी कारण से उन्होंने विद्याग्रहण का मार्ग छोड़ नौकरी करने का निश्चय कर लिया।

- **स्वतंत्रता संघर्ष में योगदान**

दिनकर जी द्वारा अपने काव्य के माध्यम से भारतीय जनमानस में क्रांति, प्रतिशोध तथा नवजागरण की चिंगारी फूकना ही उनका स्वतंत्रता संघर्ष में योगदान देना है। इसीलिए सावित्री सिन्हा कहती हैं कि "उनके व्यक्तिगत जीवन में भी कर्म और वचन का और असामंजस्य रहा- उनकी अनुभूतियां और वाणी राष्ट्र और समाज के साथ रहीं और विवेक तथा व्यवहार-बुद्धि ने समय की आग में उन्हें बचाए रखा।"[17] इनके कहने का तात्पर्य यह है कि इन्होंने अपनी नौकरी के जीवन में सरकार के अधीन रहते हुए भी सरकार के विरुद्ध अपनी कलम को रुकने नहीं दिया और तत्कालीन परिवेश की मांग के अनुसार मां भारती की वंदना में निरंतर महान कृतियों को जन्म देते गए। तब तक जब तक उनकी सांसें चलती रहीं।

"सरकारी नौकरी करते हुए भी उन्होंने राष्ट्रीय जागरण और विद्रोह की कविताएं लिखीं। भौतिक परिस्थितियों के वशीभूत होकर सरकारी नौकरी करने की कुंठा का निराकरण उन्हें इस संतोष की भावना से होता था कि सरकार उन्हें बागी और विद्रोही समझती है।"[18] दिनकर जी के ऊपर उनके समस्त परिवार की जिम्मेदारी थी इसलिए वे अंग्रेजी सरकार के अधीन न चाहते हुए भी नौकरी कर रहे थे। उस समय अंग्रेजों के खिलाफ कुछ भी कार्रवाई करने की सजा देशद्रोही के आरोप में जेल यात्रा

या मौत ही होती थी। उनके विरोध में कुछ लिखना अत्यंत विनाशकारी होता था। "आजादी की लड़ाई में लगे हुए बलिदानी भारत की जो वीरता, स्वाभिमान, अधीरता और आक्रोश दिनकर में आकर प्रकट हुए, कला में उसका विस्फोट इससे पहले उतने जोर से हिंदी में नहीं हुआ था। उदय के साथ ही दिनकर का स्थान हिंदी के क्रांतिकारी कवियों में बन गया और काव्य-लोभी जनता उनके प्रत्येक स्वर को अपने कंठ में बसाने लगी।"[19]

स्वतंत्रता संघर्ष में उनकी सक्रियता उनके निरंतर अंग्रेजी सरकार के खिलाफ जन जागरण के कारण बनी रही। दिनकर जी की 'बारदोली विजय' के नाम से 20 गीतों की एक पुस्तक का सर्वप्रथम प्रकाशन 1928 ई. में हुआ, जो गुजरात के बारदोली सत्याग्रह की कामयाबी के बाद लिखा गया था। इसी तरह उनके गीतों के प्रचंड अग्नि से भारत के नौजवान, देशरक्षक, स्वतंत्रता सेनानियों और स्वतंत्रता के दिवानों को प्रज्वलित करते रहे। "मौजूदा दौर के मशहूर कवि 'प्रेम जनमेजय' भी मानते हैं, कि दिनकर ने गुलाम भारत और आजाद भारत दोनों में अपनी कविताओं के जरिए क्रांतिकारी विचारों को विस्तार दिया। जनमेजय ने भाषा के साथ बातचीत में कहा, आजादी के समय और चीन के हमले के दिनकर ने अपनी कविताओं के माध्यम से लोगों के बीच राष्ट्रीय चेतना को बढ़ाया।"[20]

स्वतंत्रता संग्राम की लड़ाई में दिनकर ने स्वतंत्रता से पूर्व और स्वतंत्रता के बाद पूरे देश में फैली विदेशी और पूंजीपतियों के कुचक्र, शोषण, सामाजिक असमानता, अत्याचार, भ्रष्टाचार, गरीबी, भूखमरी अकाल आदि ज्वलनशील समस्याओं का डटकर अपने काव्य के माध्यम से विरोध किया।

हम कह सकते हैं कि राजनीति में जिस प्रकार गांधी, नेहरू, राममनोहर लोहिया, जयप्रकाश आदि अग्रगण्य नेताओं ने कार्य किया। उसी प्रकार साहित्य के क्षेत्र में काव्य के माध्यम से दिनकर जी ने किया।

'रेणुका' और 'हुंकार' के प्रकाशन और उसकी जन लोकप्रियता के बाद से अंग्रेजी सरकार के कान खड़े हो गए थे। यहां तक कि उन्होंने रेणुका का अनुवाद भी करवाया और फिर दिनकर को चेतावनी दी गयी। यह चेतावनी मुजफ्फरपुर के जिला मजिस्ट्रेट के द्वारा दिलवाई गयी थी।

"बोस्टेड ने पूछा- क्या आप 'रेणुका' के लेखक है? दिनकर ने हामी भरी। बोस्टेड बोले- आपने सरकार विरोधी कविताएं क्यों लिखी पुस्तक प्रकाशित करने से पूर्व सरकार से अनुमति क्यों नहीं मांगी ? दिनकर ने कहा- मेरा भविष्य साहित्य में है। अनुमति मांग कर किताब छपवाने से मेरा भविष्य बिगड़ जाएगा और मेरा कहना यह है कि रेणुका की कविताएं सरकार-विरोधी नहीं मात्र देशभक्ति पूर्ण है। यदि देश भक्ति अपराध हो, तो मैं वह बात जान लेना चाहूंगा। बोस्टेड ने कहा- देशभक्ति

अपराध नहीं है और अपराध वह कभी नहीं होगी, पर आप संभलकर चलें।"[21] अंग्रेजों द्वारा दी गई चेतावनी के बाद भी दिनकर जी निर्भीकता से उसका जवाब काव्य के माध्यम से देते रहे। 1940 ई. में जब गांधीजी संशय में थे कि आंदोलन छेड़ा जाए कि नहीं तो ऐसे अवसर पर दिनकर जी ने उसके जवाब में 'ओ द्विविधा ग्रस्त शार्दूल बोल' नामक कविता रची, जो छद्म नाम 'अमिताभ' के नाम से लिखी गई थी ।

संक्षेप में कह सकते हैं कि "रेणुका के प्रारंभिक राष्ट्रीय गीतों में उनका मन संशय-ग्रस्त रहा। युग की तमिस्रा में किस ज्योति की रागिनी गाएं, यह प्रश्न उनके सामने था, लेकिन शीघ्र, ही युग की चतुर्दिक जागृति ने उनका दिशा-निर्देश करके, श्रृगीं फूंक कर, महान प्रभाती-राग गाने की प्रेरणा दी, प्रभाती, जिससे सुप्त भवन के प्राण जाग उठें, जो आवाज भारतीय मानस में सोते हुए शार्दूल को चुनौती भेज सके, जो युगधर्म के प्रति भारतीय जनता को जागरुक कर सके, जिसको सुनकर युग-युग में थमी हुई भारतीय जनता के निर्बल प्राणों में क्रांति की चिंगारियां उड़ने लगे।"[22] ये मांग थी एक समय पुत्र की और मां भारती को दिनकर के रूप में वह पुत्र मिला। इस तरह कवि ने अपनी 'रेणुका', 'हुंकार', 'सामधेनी', 'कुरुक्षेत्र', 'परशुराम की प्रतीक्षा' काव्य-संग्रहों में संकलित 'हिमालय', 'तांडव', 'कविता की पुकार', 'बोधिसत्व', 'कस्मैदेवाय', 'मिथिला', 'पाटलिपुत्र की गंगा', 'बागी', 'जवानियां', 'हाहाकार', 'दिल्ली',

'आग की भीख', 'अहिंसा और शांति', आदि जैसी ओजस्वी तथा वीर रस से पूर्ण कविताओं के माध्यम से भारतीय जनमानस का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया। उनके स्वतंत्रता संग्राम में इसी योगदान के कारण वह जनकवि और राष्ट्रकवि बने।

- **व्यवसाय**

जैसा कि हमने देखा कि दिनकर जी की शिक्षा-दीक्षा में उनकी मां और भाइयों ने अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया था। आर्थिक कठिनाइयों के कारण दिनकर जी आगे पढ़ नहीं पाए। उनकी जिंदगी उनके परिवार के नाम गिरवी हो चुकी थी। शुरुआत में उन्हें नौकरी के लिए बहुत भटकना पड़ा था। वह प्रतिभाशाली व्यक्तित्व के धनी थे। उस समय बिहार में जमींदारों का दबदबा वह केवल अपने समकक्ष लोगों को ही सहायता करते थे। दिनकर जी ने बी.ए. (इतिहास ऑनर्स) से ग्रेजुएट किया और डिप्टीगिरी के लिए उस समय इतनी अहर्ता की ही जरूरत होती थी परंतु एक कृषक के बेटे होने के कारण दिनकर जी की तरफ कभी ध्यान नहीं दिया गया। उनका नाम हर बार छांट दिया जाता था। पढ़ाई करने की उनकी इच्छा तो थी परंतु परिवार के भरण-पोषण के लिए वे नौकरी की तलाश में लग गए। काफी जद्दोजहद के बाद उन्हें एक हाईस्कूल में प्रधानाध्यापकी की नौकरी 1933 ई. में मिली। जमींदारों के साथ विरोध करना उनका व्यक्तिगत अनुभव था। इस पद से उन्होंने

इस्तीफा दे दिया क्योंकि स्कूल के चेयरमैन और मंत्री के हाथों में स्कूल प्रबंधन था। इसी कारण उन्होंने इस्तीफा दिया क्योंकि विद्यालय का वातावरण उनके अनुकूल नहीं था। उनके व्यक्तित्व को आघात पहुंचता था।

तत्पश्चात "1934 ई. में उन्होंने बिहार सरकार के अधीन सब-रजिस्ट्रारी स्वीकार की। 1943 ई. में उनका तबादला युद्ध-प्रचार-विभाग में हुआ। 1947 ई. में वे बिहार सरकार में प्रचार-विभाग के उपनिदेशक और 1950 ई. में मुजफ्फरपुर कॉलेज में हिंदी विभागाध्यक्ष हुए। यह क्रम 1952 ई. तक चलता रहा। 1952 ई. में उन्होंने सरकारी नौकरी से इस्तीफा दिया और वह राज्यसभा के कांग्रेसी सदस्य हो गए। 1964 ई. में वे राज्यसभा से इस्तीफा देकर भागलपुर विश्वविद्यालय के वाइस-चांसलर लगे। उसमें भी मन नहीं लगा। उससे भी इस्तीफा दे दिया। फिर वह भारत सरकार के हिंदी सलाहकार के रूप में नियुक्त हुए।"[23]

सन 1934 ई. से 1939 ई. के बीच जब वे सब रजिस्ट्रार के पद पर थे, इस दौरान उनका तबादला बाईस बार किया गया था, क्योंकि सरकारी पद पर रहते हुए भी उन दिनों सरकार के खिलाफ कविताएं लिखा करते थे। अंग्रेजों की नजर दिनकर जी पर केंद्रित हो चुकी थी। इस स्थानांतरण से दिनकर जी को खुशी भी होती थी, क्योंकि इसके दौरान

उन्हें ट्रांसफर्टी की छुट्टियां मिलती थी। जिसमें उन्हें कविता लिखने का मौका मिल जाता था।

दिनकर नौकरी से मुक्त होने के बाद, 1971 ई. से, देश-विदेश में भ्रमण, अध्ययन, चिंतन, लेखन आदि कार्यों में व्यतीत किया। इसके अतिरिक्त दिनकर भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद, सरकारी भाषा आयोग, आकाशवाणी की केंद्रीय सलाहकार समिति के सदस्य तथा केंद्रीय फिल्म सेंसर बोर्ड से भी जुड़े हुए रहे।

- **सम्मान**

दिनकर जी को अनेक उपाधियों, पुरस्कारों तथा पदकों से सम्मानित होने का अवसर प्राप्त होता रहा। उन्हें भारत में ही नहीं विश्व में भी ख्याति की प्राप्ति हुई। उनकी साहित्यिक उपलब्धियाँ इस प्रकार हैं-

सन 1949 ई. में महादेवी वर्मा द्वारा आयोजित समारोह में 'कुरुक्षेत्र' तथा 'रश्मिरथी' के लिए साहित्यिक सम्मान प्राप्त हुआ।

1959 ई. में साहित्य के क्षेत्र में दी गयी सेवाओं के लिए भारत सरकार द्वारा 'पदम भूषण' द्वारा सम्मानित किया।

1962 ई. में भागलपुर विश्वविद्यालय द्वारा इन्हें डी.लिट. (डॉक्टर ऑफ लिटरेचर) की उपाधि से अलंकृत किया गया।

'कुरुक्षेत्र' तथा 'रश्मिरथी' के लिए एक बार फिर काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने 'पंडित महावीर प्रसाद द्विवेदी' नामक दो पदक प्रदान किए गए। 'कुरुक्षेत्र' के लिए ही भारत सरकार तथा उत्तर प्रदेश की सरकार द्वारा उन्हें पुरस्कृत किया गया।

'उर्वशी' की रचना के लिए 1973 ई. में भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हुआ। "कुरुक्षेत्र पर साहित्यकार संसद, प्रयाग द्वारा पुरस्कृत किए जाने के अवसर पर सन 1949 ई. में प्रयाग की गंगा की सैकत भूमि पर साहित्यकों द्वारा सम्मान-समारोह का आयोजन किया गया। इसका सभापतित्व राष्ट्रकवि श्री मैथिलीशरण गुप्त ने किया था तथा हिंदी के प्रतिष्ठित कवियों ने उसमें भाग लिया था जिनमें मुख्य थे। सर्वश्री सुमित्रानंदन पंत, महादेवी वर्मा, डॉ. रामकुमार वर्मा, 'हितैषी', श्री नारायण चतुर्वेदी, रायकृष्णदास। इसी अवसर पर इलाहाबाद की 'परिमल' की ओर से अलग से मानपत्र भी दिया गया था।"[24] परिमल इलाहाबाद की प्रसिद्ध साहित्यिक संस्था है।

इसके अलावा विदेश भ्रमण के लिए दिनकर जी फ्रांस, इंग्लैंड, मिस्र, चीन, स्विजरलैंड, रूस आदि देशों में गए जहां इन्हें सम्मानित किया गया।

मन्मथनाथ के अनुसार एक बार "जब वे वारसा (पोलैंड) गए, वहां वारसा विश्वविद्यालय में कवि सम्मेलन भी हुआ था। इस सम्मेलन में

इंग्लैंड के कवि श्री लारी ली (Laurie lee) ने एक कविता पढ़ी। जिसका शीर्षक 'बॉम्बे-एराइवल' था, और जिसमें अंग्रेजों के पहले-पहल भारत आने का उल्लेख था। श्री ली ने दिनकर जी की ओर हास्यमिश्रित संकेत से देखा ही था कि दिनकर जी बोल उठे- "मिस्टर ली, अब दूसरी कविता आप 'बॉम्बे डिपार्चर' पर लिखिए, क्योंकि अंग्रेज भारत से जा चुके हैं।"[25]

ऐसे ही दिनकर भ्रमण करने के दौरान भारत का प्रतिनिधित्व कर भारतीय संस्कृति का आदान-प्रदान भी करते रहे। उस समय दिनकर उस ख्याति का नाम था, जिसने विदेशी और अन्य भारतीय भाषाओं में उनकी कृतियों का अनुवाद करवाया। यह भी उनका सम्मान ही था। उनकी कृतियों का अनुवाद इस प्रकार से है, जिसका वर्णन सावित्री सिन्हा ने किया है- "जापान से निकलने वाले अंग्रेजी पत्र 'Orient West' में कलिंग विजय का अनुवाद प्रकाशित हुआ। 'United Asia' में उनकी आठ कविताओं का अनुवाद छपा। रूस के 'विदेशी साहित्य ग्रंथमाला' के अंतर्गत उनकी कविताओं के संकलन का रूसी अनुवाद 1963 ई. में प्रकाशित हो रहा है। 'संस्कृति के चार अध्याय' के प्राचीन खंड का अनुवाद भी विभिन्न भारतीय भाषाओं में हो रहा है। कन्नड़ और तेलुगु में वह प्रकाशित हो चुका है।"[26]

भारत सरकार ने इन्हें रूस भेजा। जहां इन्होंने पांच श्रेष्ठ साहित्यकारों के शिष्टमंडल का नेतृत्व किया। पाश्चात्य तथा भारतीय

हिंदी साहित्य के इतिहास में इन्हें साहित्य सृजन के अतिरिक्त वक्ता, विचारक, हिंदी-सेवी आदि के रूप में सम्मानजनक रूप से देखा जाता है।

हालांकि दिनकर को जनता के प्रेम से ऊपर कुछ नजर नहीं आता था, परंतु ये उनके प्रतिभा संपन्न व्यक्तित्त्व का परिणाम ही था कि उन्हें अंतरराष्ट्रीय स्तर तक मान-सम्मान अर्जित करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

- **समग्र व्यक्तित्त्व का मूल्यांकन**

दिनकर जी के व्यक्तित्त्व की विशेषता यह है कि वह न केवल भारत में अपितु वैश्विक स्तर पर भी मान एवं प्रतिष्ठा प्राप्त कर चुके थे । दिनकर जी के व्यक्तित्त्व के संबंध में सावित्री सिन्हा जी का मत है कि "दिनकर के व्यक्तित्व में धरतीपुत्र का आत्मविश्वास और दृढ़ता साहित्यकार की अनुभूति-प्रवणता, दार्शनिक का तत्व चिंतन तथा राजपुरुष का ओज और तेज है दूसरे शब्दों में उनके जीवन की कहानी हल, हंसिया, लेखनी और पार्लियामेंट की बैठक की कहानी है। उनके बाह्य व्यक्तित्त्व में भी क्षत्रिय का तेज, ब्राह्मण का अहम, परशुराम का गर्जन और कालिदास की कलात्मकता है। उनके इसी व्यक्तित्व के कारण निराला जी उन्हें 'ईरानी' कहा करते थे। गौर वर्ण, उन्नत मस्तक, आर्य नासिका, तेजपूर्ण नेत्र और ऊंचे कद के साथ लंबी पतली उंगलियों का सामंजस्य ऐसा बैठता है कि उनके कविता पाठ करते समय ऐसा मालूम

पड़ता है, जैसे यह परशुराम केवल गरज सकता है फ़रसा उठाने की सामर्थ्य उसमें नहीं होगी। उनके हाथ तो लेखनी पकड़ने के लिए ही बनाए गए जान पड़ते हैं।"[27]

वहीं एक अन्य लेखक मन्मथनाथ गुप्त दिनकर के व्यक्तित्त्व के बारे में बताते हैं कि "गोरा-चिट्टा रंग, लंबाई पांच फुट ग्यारह इंच भारी-भरकम शरीर, बड़ी-बड़ी आंखें जो रचना के दिनों में चिंतनकलिष्ट लगती थीं, पर बात करते समय या कविता पाठ करते समय प्रदीप्त हो उठती थीं, ललकार-भरी बुलंद आवाज, तेज चाल और क्षिप्र बुद्धि- ये हैं वे बहिरंग विशेषताएं जिनसे दिनकर का व्यक्तित्त्व बना है। वे किसी भी परिस्थिति पर तुरंत प्रतिक्रिया करते थे। उनकी कविता उन्हीं प्रतिक्रियाओं का कलात्मक प्रतिफलन-भर है। उनकी कविता में उनका इंद्रधनुषवर्णी व्यक्तित्व आक्रमणकारी रूप से सामने आता है। उनके व्यक्तित्व से प्रभुत्व की आभा छिटकती थी, स्वाभिमान और आत्मविश्वास की प्रबलता भी व्यंजित होती थी।"[28]

शेखरचंद्र जैन जी कहते हैं, "कवि का बाह्य दर्शन बड़ा ही प्रभावशाली एवं प्रतिभा संपन्न है। छः फुट लंबे शरीर से दृढ़ और रंग से गोरे दिनकर जी के उन्नत ललाट को देखकर सहज ही मन आकर्षित हो जाता है। हिंदी काव्य जगत का परशुराम रूप हमारे समक्ष अंकित हो उठता है।"[29]

दिनकर स्वभाव से क्रोधी भी थे, और विनयशील भी। क्रोध का परिणाम ही उनकी ओजस्वी रचनाएं हैं और प्रसाद और माधुर्य से परिपूर्ण रचनाओं में उनकी विनयशीलता झलकती है। जिसके उदाहरण हैं- उर्वशी और रसवंती ।

उनके क्रोधी स्वभाव की झलक इस घटना में मिलती है। एक बार मिथिला में जब वे बच्चों को लेकर मंदिर गए थे। वहां ठंड से कंपकपाती स्त्रियों को पंडित ने सिर्फ इसलिए रोका था, क्योंकि वहां पंडित सेठ यजमान की पूजा करवा रहा था। यहां धर्म को उन्होंने पूंजीवादियों के चंगुल में फंसा हुआ देखा। तभी "दिनकर बोले- हे महादेव! लोग मुझे क्रांतिकारी कवि कहते हैं और आप पंडा के गुलाम हो गए। इसलिए, अगर मैं जल चढ़ाऊं, तो इसमें मेरे प्रशंसकों का अपमान है ।"[30] फिर क्या था, उन्होंने क्रोध में आकर जलभरी सुराही शंकर के माथे पर दे मारी।

दिनकर जी अक्सर गुस्से में आने के बाद रो पड़ते थे। "वाल्मीकि की करुणा और दुर्वासा-सा क्रोध उनके व्यक्तित्व में साथ-साथ विद्यमान है।"[31] इनका व्यक्तित्व विवेकात्मक कम और भावनात्मक अधिक था। इस प्रसंग में एक बार की बात है- "श्री बनारसीदास चतुर्वेदी के अध्ययन कक्ष में टंगे हुये चंद्रशेखर आजाद की गिरफ्तारी का चित्र देखकर अन्य लोग उस घटना का वर्णन विवेचन कर रहे थे, लेकिन दिनकर की आंखों से अविरल अश्रु धार बह रही थी। चर्चा बंद हो गई, लेकिन उनके आंसुओं

का प्रवाह चलता ही रहा।"[32] इस प्रकार निराला-जयंती समारोह में सभापतित्व करते हुए उनके भावुक हृदय का दूसरा उदाहरण सामने आया। "श्री शिवमंगल सिंह 'सुमन' द्वारा 'जूही की कली' के पाठ का वह झूम- झूम कर आनंद ले रहे थे। उसके तत्काल बाद ही 'सरोज-स्मृति' कविता का पाठ आरंभ हो गया और दिनकर भाव-विभोर होकर आंखों पर रुमाल रखकर आंसू पोंछते रहे। कोमलता और शौर्य के जिस संगम की बात दिनकर बार-बार अर्ध-नारीश्वर के सिद्धांत की चर्चा करते हुए करते हैं, वह मानो उनके व्यक्तित्व में साकार मिलती है।"[33]

इस घटना से पता चलता है, कि उन्हें आवेश में आते और शांत होते क्षण भर भी नहीं लगता था। ऐसी अनेक घटनाएं हैं, जो दिनकर के संवेदनात्मक, भावात्मक व क्रोधी व्यक्तितत्व को दर्शाती हैं। इसके अतिरिक्त वे विनोदी व हास्यप्रिय भी थे। अक्सर कवि सम्मेलन में अट्टहास छा जाता था। व्यंग्य करना भी उनके स्वभाव में था। वह ग्रामीण कृषक ब्राह्मण परिवार से थे, इसलिए उन्हें देहाती संस्कार प्रिय लगते थे। और इसी कारण विद्यार्थी जीवन में उनका पहनावा अत्यंत सीधा-सादा था। बहुत सादगी थी, उनके पहनावे में।

क्रांतिकारिता भी उनके व्यक्तितत्व में शामिल है। इस प्रसंग में दिनकर जी कहते हैं कि- "राष्ट्रीयता मेरे व्यक्तितत्व के भीतर से नहीं जन्मी, उसने बाहर से आकर मुझे आक्रांत किया।"[34] दिनकर का

क्रांतिकारी होना, उनके तत्कालीन परिवेश का परिणाम था और वे थे भी इतिहास के छात्र इसलिए वे अपने अतीत और वर्तमान से भलीभांति परिचित थे। इसके अतिरिक्त दिनकर के व्यक्तित्व में भारतीय संस्कृति के प्रति प्रेम, नारी भावना, युग दृष्टा, युगचेता आदि विशेषताएं शामिल हैं, जो उनकी रचनाओं में भी देखने को मिलती है।

आ. कृतित्त्व

किसी भी रचनाकार का व्यक्तित्व, कृतित्व पर प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रभाव डालता ही है। रामधारी सिंह 'दिनकर' जी का रचनाकाल बहुत ही विस्तृत रहा है। उनका कवि जीवन 1922 ई. से शुरू होता है। सन 1922 ई. से सन् 1974 ई. के बीच हिंदी साहित्य छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद तथा नई कविता इन सभी युगों से होकर गुजरती है। समाज में घटित होने वाले सभी परिवर्तनों और घटनाओं का प्रभाव दिनकर जी पर पड़ा। दिनकर जी का साहित्य में तब उदय हुआ जब देश पराधीन था। दिनकर ने साहित्य की सभी विधाओं में रचना की है तथा विभिन्न विषयों को लेकर की है। उनकी कृतियों में समाज हित, देशहित, शोषित वर्ग के प्रति सहानुभूति, नारी भावना, पूंजीपतियों का विरोध, क्रांतिकारी, ओजस्विता, विद्रोह, राष्ट्रहित चिंतन आदि के दर्शन होते हैं। इन्होंने राष्ट्रीय काव्य के अतिरिक्त श्रृंगारिक, आध्यात्मिक भावना से

परिपूर्ण रचनाओं की सृष्टि भी की। इससे उनके चिंतन की व्यापकता का पता चलता है।

दिनकर जी की काव्य रचना का प्रारंभ इस प्रकार होता है। प्रारंभ में दिनकर 'युवक' नामक पत्र में 'अमिताभ' के नाम से लिखते थे। "दिनकर की पहली कविता सन 1924 या 25 में छपी थी। जबलपुर का 'छात्रसहोदर' नामक मासिक पत्र श्री नरसिंहदास के संपादकत्व में दुबारा निकला था। 1929 ई. में बारदोली-संदेश नाम से उनके राष्ट्रीय गीतों का छोटा-सा संग्रह निकला, जिनकी रचना बारदोली सत्याग्रह को लेकर की गई थी। मैट्रिक पास करने के पूर्व उन्होंने 'वीर बाला' और मेघनाथ वध नामक दो अधूरे खंड-काव्य भी लिखे थे, जिनकी पांडुलिपियाँ अब अनुपलब्ध हैं। मैट्रिक करने के बाद एक छोटा-सा खंडकाव्य 'प्रणभंग' नाम से निकला।"[35]

दिनकर जी ने अपने व्यक्तित्त्व के अनुरूप ही हिंदी साहित्य व साहित्य जगत को श्रेष्ठतम रचनाएं प्रदान कीं। इनकी संपूर्ण रचनाओं का विकास क्रम इस प्रकार है-

- **दिनकर जी की काव्य रचनाएं**

रचना	प्रकाशन वर्ष
बारदोली विजय	1928 ई.
प्रणभंग (खंडकाव्य)	1929 ई.
रेणुका	1935 ई.
हुंकार	1938 ई.
रसवंती	1939 ई.
द्वंदगीत	1940 ई.
कुरुक्षेत्र (महाकाव्य)	1946 ई.
धूपछांह (बाल साहित्य)	1947 ई.
सामधेनी	1947 ई.
बापू (शोक काव्य)	1947 ई.
इतिहास के आंसू	1951 ई.
मिर्च का मजा (बाल साहित्य)	1951 ई
धूप और धुआँ	1951 ई.
रश्मिरथी (खंडकाव्य)	1952 ई.

दिल्ली	1954 ई.
नीम के पत्ते	1954 ई.
नील कुसुम	1955 ई.
सूरज का ब्याह (बाल साहित्य)	1955 ई.
चक्रवाल	1956 ई.
कवि-श्री	1957 ई.
सीपी और शंख (अनुदित काव्य)	1957 ई.
नए सुभाषित	1957 ई.
लोकप्रिय कवि दिनकर	1960 ई.
उर्वशी (गीतिनाट्य)(महाकाव्य)	1961 ई.
परशुराम की प्रतीक्षा	1963 ई.
आत्मा की आंखें (अनुदित संग्रह काव्य)	1964 ई.
कोयला और कवित्व	1964 ई.
हारे को हरिनाम	1970 ई.
दिनकर के गीत	1973 ई.
रश्मिलोक	1974 ई.

उर्वशी तथा अन्य **श्रृंगारिक** कविताएं	1974 ई.

गद्य रचना

रचना	**प्रकाशन वर्ष**
मिट्टी की ओर	1946 ई.
चित्तौड़ का साका	1948 ई.
अर्धनारीश्वर	1952 ई.
रेती के फूल	1954 ई.
राष्ट्रभाषा और राष्ट्रीय एकता	1955 ई.
हमारी सांस्कृतिक एकता	1955 ई.
भारत की सांस्कृतिक कहानी	1955 ई.
संस्कृति के चार अध्याय	1956 ई.
उजली आग (कहानी)	1956 ई.
देश-विदेश (यात्रा विवरण)	1957 ई.
काव्य की भूमिका	1958 ई.
वेणुवन	1958 ई.
वट पीपल	1961 ई.

लोकदेव नेहरू (संस्मरण)	1965 ई.
शुद्ध कविता की खोज	1966 ई.
राष्ट्रभाषा आंदोलन और गांधीजी	1968 ई.
हेराम! (रेडियो रूपक)	1968 ई.
धर्म, नैतिकता और विज्ञान	1969 ई.
संस्मरण और श्रद्धांजलियाँ (संस्मरण)	1970 ई.
भारतीय एकता	1971 ई.
मेरी यात्राएँ (यात्रा-विवरण)	1971 ई.
विवाह की मुसीबतें	1973 ई.
दिनकर की डायरी	1973 ई.
चेतना की शीला	1973 ई.

दिनकर जी की मुख्य रचनाओं का विवरण इस प्रकार है -

काव्य रचनाएं

रेणुका

इसका प्रकाशन 1935 ई. में हुआ। यह इनका सर्वप्रथम ग्रंथ है। जिसमें उन्होंने जनता का ध्यान आकृष्ट करने का प्रयास किया और वे सफल भी हुए। इस काव्य संग्रह ने दिनकर को जनता का लोकप्रिय कवि

बना दिया। यह दिनकर जी की मुख्यतः राष्ट्रीय रचनाओं से ओतप्रोत ग्रंथ है। 'रेणुका' काव्य- संग्रह की प्रवृत्तियां हैं- राष्ट्रीय चेतना को अभिव्यक्त करती भारत के अतीत की गौरव गाथा, अंग्रेजों के दमन चक्र निर्बलों का शोषण, अत्याचारों तथा अनेक यातनाओं को सहन करने की विवशता तथा उसका विद्रोह, प्रकृति-सौंदर्य से संबंधित कविता, सौंदर्य तथा श्रृंगार परक कविता, नारी संबंधित कविता आदि। रेणुका कवि के जवानी का उद्घोष है। कवि ने तत्कालीन अंग्रेजी दमन और अत्याचार को देखा और महसूस किया। जिसने कवि के युवा मन को आंदोलित किया। इसलिए कवि युग की मांग के अनुसार 'कस्मैदेवाय' कविता के माध्यम से जनता व युवाओं के मन में क्रांति के स्वर का उद्घोष करते नजर आते हैं-

"दलित हुए निर्बल सबलों से,
मिटे राष्ट्र, उजड़े दरिद्र जन,
आह ! सभ्यता आज कर रही
असहायों का शोणित-शोषण ।
क्रांति-धात्रि कविता ! जागे, उठ,
आडम्बर में आग लगा दे
पतन, पाप, पाखंड जलें,

जग में ऐसी ज्वाला सुलगा दे !"[36]

भारत के गौरव को दर्शाती कुछ पंक्तियां-

"सुख सिंधु, पंचनद, ब्रह्मपुत्र,
गंगा, यमुना की अमिय-धार
जिस पुण्य भूमि की ओर बही
तेरी विगलित करुणा उदार
उस पुण्य भूमि पर आज तपी !
रे आन पड़ा संकट कराल,
व्याकुल तेरे सुत तड़प रहे
डंस रहे चतुर्दिक विविध व्याल ।
मेरे नगपति ! मेरे विशाल ।"[37]

इन पंक्तियों में दिनकर कहते हैं, कि हिमालय सदियों से भारत की रक्षा करता आया है। वह आक्रमण के समय शत्रुओं की रूकावट बन जाता है अर्थात हिमालय कहता है, कि भारत को नुकसान पहुंचाने से पहले तू मुझे पार कर, मेरा सिर काट, फिर भारत तक पहुंचना। पुण्यभूमि भारत को कहा गया है। भारत में अनेक धर्मों का उदय हुआ। यह भारत का गौरव प्रसंग ही है। इस प्रकार दिनकर की 'कविता की पुकार', 'पाटलिपुत्र की गंगा', 'बागी', 'राजा-रानी' 'मिथिला में शरत', 'विश्व छवि', 'राजकुमारी

और बांसुरी', 'वैभव की समाधि पर' आदि मुख्य कविताओं में उनकी सभी प्रवृत्तियों की झलक दिखाई देती है।

हुंकार

इसका प्रकाशन 1938 ई. में हुआ। 'हुंकार' राष्ट्रीय चेतना के विकास की महत्वपूर्ण कड़ी है। 'हुंकार' इनकी राष्ट्रीय रचनाओं का दूसरा काव्य संग्रह है। हम कह सकते हैं कि इसमें दिनकर एक उग्र क्रांतिकारी के रूप में दिखाई देते हैं। इसमें ओजपूर्ण कविताओं के अतिरिक्त **शृंगार** और करूण रस के मार्मिक चित्रण मिलते हैं। इसमें तत्कालीन समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है। इन समस्याओं में कवि साम्राज्यवाद और पूंजीवाद से क्षुब्ध होकर कृषकों, दलितों, शोषितों, स्त्री वर्ग आदि के अत्याचारों का बदला लेकर समाधान चाहता है। इसमें वर्ग संघर्ष अधिक प्रबल दिखाई देता है। कवि अपनी ओजपूर्ण वाणी से हतोत्साहित भारतीयों को जगाने का प्रयास करते हैं। 'हुंकार' के माध्यम से दिनकर जी ने तत्कालीन क्रांति युग का सही प्रतिनिधित्व किया है। दिनकर जी ने चक्रवाल की भूमिका में स्वयं स्वीकार किया है कि सुयश उन्हें 'हुंकार' से मिला। वह इसलिए क्योंकि उत्साह, शौर्य, ओज और विद्रोही भावना ही 'हुंकार' का मूल स्वर है और ये सभी भाव जनता के पक्ष में है।

'हुंकार' काव्य संग्रह की 'आमुख' कविता अत्यंत महत्वपूर्ण है। कवि नए युग की तलाश में है। इसके लिए वह क्रांतिकारी बन बैठा है।

कवि को उसके देश पर, देश की क्रांति पर तथा अपनी शक्ति पर पूर्ण विश्वास है। कवि को नए युग के आगमन की आहट होती है-

"जय हो युग के देव पधारो! विकट, रुद्र हे, अभिमानी
मुक्त केशिनी खड़ी द्वार पर कब से भावों की रानी ।
अमृत-गीत तुम रचो कलानिधि । बुनो कल्पना की जाली ।"[38]

'हुंकार' में क्रांतिकारी कविताएं हैं। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण हैं- 'दिल्ली', 'विपगथा', 'हिमालय' आदि। दिनकर जी लोकमंगल की भावना से प्रेरित होकर भारत के शिक्षित समुदाय का ध्यान आकृष्ट करते हैं। "हुंकार के गीतों को देखते हुए लगता है, कि दिनकर के काव्य में मुर्दों को भी जगाने की शक्ति है। इस संग्रह में राष्ट्रीय रचनाएं संकलित है। परंतु उसके लिए जिन काव्य बिम्बों का प्रयोग हुआ है, पूर्णत: रूमानी है। क्रांति और मृत्यु जैसी भयानक बातों के लिए भी पायल की झुनझुनाहट करने वाली या घुंघट में सजी नारी की कल्पना कवि ने की है।"[39] संक्षेप में हम कह सकते हैं कि जहां कवि रेणुका में तत्कालीन परिस्थिति से संवेदनीय और दुखी नजर आते हैं। वही हुंकार में वह विद्रोह की सशक्त वाणी की 'हुंकार' भरते नजर आते हैं।

रसवंती

इसका प्रकाशन 1939 ई. में हुआ। 'रसवंती' दिनकर की आरंभिक युग की रचना है। "रेणुका और 'हुंकार' के विपरीत 'रसवंती' की रचना

निरूद्देश्य प्रसन्नता से हुई है और इसमें किसी निश्चित संदेश का अभाव-सा है। इन गीतों में, मैं अपने हाथ से छूट-सा गया हूं और प्राय: अकर्मण्य आलसी की भांति उस प्रगल्म स्त्री के पीछे-पीछे भटकता फिरा हूं जिसे कल्पना कहते हैं।"[40] इसमें संग्रहीत कविताओं में प्रेम एवं **शृंगार** रस की अनुभूति होती है।

"बड़े यत्न से जिन्हें छिपाया ये वे मुकुल हमारे,
जो अब तक बच रहे किसी विधिध्वंस्क इष्ट प्रलय से।"[41]

यह पंक्तियां 'गीत शिशु' से ली गई हैं, इस प्रसंग में दिनकर जी का कहना है कि "संभव है अपने अर्थ में मुझे प्रगतिशील समझने वाले कुछ पाठक रसवंती से नाराज भी होंगे। उनके आश्वासन के लिए मैं निवेदन करूंगा कि दिन-भर सूर्य के ताप में जलने वाले पहाड़ के हृदय में भी, चांदनी की शीतलता को पाकर, कभी-कभी बांसुरी का-सा कोई अस्पष्ट स्वर गूंजने लगता है, जो पत्थर की छाती को छोड़कर किसी जलधारा के बह जाने की आकुलता का नाद है।"[42] क्योंकि दिनकर ने इस काव्य-कृति की रचना 'रेणुका' व 'हुंकार' के बाद की थी ।

डॉ. शेखरचंद्र जैन ने भी इस प्रसंग में कुछ ऐसा कहा है कि- "कवि जिन दिनों 'रेणुका' और 'हुंकार' के क्रांति गीत गा रहा था- उसकी सौंदर्य भावना 'रसवंती' की पृष्ठभूमि तैयार कर रही थी और द्वंद का धुंआ भी उसे घेरे हुए था। कवि के व्यक्तित्त्व की यह विशेषता थी, कि

'द्वन्दगीत' का धुआं, 'हुंकार' की आग और 'रसवंती' का रस उनके हृदय में एक साथ विद्यमान रहे हैं।"[43]

'रसवंती' में लगभग सभी कविताओं में **शृंगारि**कता, माधुर्य, कोमलता, नारी चेतना आदि भावों के दर्शन होते हैं। इसके अलावा प्रेम प्रसंग की अभिव्यक्ति भी इनकी कविताओं में दिखाई देती है परंतु यह प्रेम वासनाविहीन है। कुल मिलाकर हम यह कह सकते हैं कि रसवंती में कवि ने ईमानदारी से **शृंगारि**कता भावों की स्पष्ट एवं सहज अभिव्यक्ति की है।

द्वंदगीत

इसका प्रकाशन 1940 ई. में हुआ। इस काव्य संग्रह के नाम से ही पता चलता है कि इसका मूल स्वर द्वंदग्रस्त की अभिव्यक्ति है। दिनकर जी स्वयं लिखते हैं- "द्वंदवगीत' के पदों का आरंभ उन दिनों हुआ था, जब कविता की गर्मी मेरी धमनियों में पहले-पहल महसूस होने लगी थी और मैं आग की पहली लपट के बहुत करीब था।"[44]

इस संग्रह में कवि ने मानव समस्याओं से ग्रसित होकर अपनी अनुभूतियों को अभिव्यक्ति प्रदान की है। कवि ने जीव-जगत, ब्रह्मा, मृत्यु, आत्मा, परमात्मा, सुख-दुख, हर्ष-विषाद आदि द्वंदों में कवि फंसा हुआ है। दिनकर जी ने जीवन को क्षणभंगुर बताया है और ब्रह्मा की व्यापकता, यौवन की मदान्धता आदि का मार्मिक चित्रण किया है। अगर

इसमें द्वंदगीत में संग्रहित कविताओं की श्रेणियों की बात करें तो इन्हें हम रहस्यात्मक, लोकमंगल, सौन्दर्यात्मक और सुखात्मक आदि में वर्गीकृत पाते हैं। दिनकर जी कहते हैं, कि हमें कभी भी जीवन से पलायन नहीं करना चाहिए, चाहें हमारे ऊपर दुखों का पहाड़ ही क्यों न टूट पड़े। कवि सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करने पर बल देते हैं। संसार में सुखपूर्वक जीवन जीने का कारण उसे स्वर्ग समान बताया है-

"यह फूलों का देश मनोरम
कितना सुंदर है रानी !
इससे मधुर स्वर्ग परियाँ
तुझ-सी क्या सुंदर कल्याणी?
अरे, मरूंगा कल तो फिर क्यों
आज नहीं रसधार बहे?
फूल-फूल पर फिरे ना क्यों
कविता तितली-सी दीवानी ?"[45]

"कवि का द्वंद जीवनगत आस्था-अनास्था तथा ईश्वर गान-आस्था-अनास्था के संबंधों में भी मिलता है। इस तुरंत द्वंद्वात्मक भावना में कवि की रहस्यात्मक भावनाएं ही प्रकट हुई हैं। कवि को कहीं अपने जीवन और शक्तियों पर विश्वास है तो कहीं क्षुद्रता के कारण संपूर्ण निराशा है। द्वंद-गीत में कवि के विविध विचार प्रकट हुए हैं। कवि का

स्वर तो सर्वत्र द्वंद्वात्मक है, परंतु उसकी ध्वनि में सर्वत्र परपीड़ा के प्रति द्रवित होना ही मुखरित हुआ है।"[46]

कुरुक्षेत्र

इसका प्रकाशन 1946 ई. में हुआ। सन 1941 ई. से 1946 ई. तक की मनोदशा का परिणाम है- 'कुरुक्षेत्र'। 'कुरुक्षेत्र' सात सर्गों में वर्गीकृत है। इसे आधुनिक युग की गीता कहा गया है। वैसे 'कुरुक्षेत्र' की काव्य विधा को लेकर कवियों में मतभेद है, परंतु दिनकर ने 'कुरुक्षेत्र' के निवेदन में कहा है कि इसे प्रबंध के रूप में लाने की मेरी कोई निश्चित योजना नहीं थी। प्रबंध की एकता उसमें चर्चित विचारों को लेकर है। 'कुरुक्षेत्र' में कवि ने महाभारत के शांति पर्व को आधार बनाकर द्वितीय विश्वयुद्ध से उत्पन्न समस्याओं को उठाया है।

'कुरुक्षेत्र के पूर्वार्ध में कवि भावुक हो जाता है और उत्तरार्ध में हमारी बुद्धि को संतुष्टि प्राप्त होती है तथा अंत में भीष्म की शंकाओं को युधिष्ठिर के माध्यम से समाधान प्रस्तुत करते हुए दिखाई देते हैं।

संक्षेप में हम कह सकते हैं, कि दिनकर जी की 'कुरुक्षेत्र' समस्या प्रधान महाकाव्य है। जिसका समाधान गीता के महान उपदेश निष्काम कर्म से ही हो सकता है। कवि कहते हैं कि भयंकर महायुद्ध के बाद केवल पश्चाताप और ग्लानि के अतिरिक्त कुछ हासिल नहीं होता। द्वितीय विश्वयुद्ध और महाभारत की तुलना करते हुए कहते हैं कि युद्ध विश्व को

क्या दे गया? 'कुरुक्षेत्र' में युधिष्ठिर जैसे-जैसे युद्ध परिणाम के बाद चारों तरफ कुरुक्षेत्र के मैदान में मानवीय विनाश देखते हैं। वैसे-वैसे उनकी आत्मग्लानि बढ़ती जाती है। अधिकांश लोग कुरुक्षेत्र को समाजवादी रचना मानते हैं, परंतु हम कह सकते हैं कि उस पर भारतीय आदर्शवाद तथा गीता के कर्मवाद का प्रभाव है। अतः 'कुरुक्षेत्र' एक मानवतावादी काव्य है।

धूपछांह

इसका प्रकाशन सन 1947 ई. में हुआ। यह एक बाल साहित्य काव्य-संग्रह है। इसमें कुल 16 कविताएँ हैं। इस कविता संग्रह में पश्चिमी तथा बंगाली कवियों की अनुदित कविताएं भी हैं।

सामधेनी

इसका प्रकाशन 1947 ई. में हुआ। 'सामधेनी' काव्य संग्रह मुख्य रूप से क्रांतिकारी स्वर के लिए जानी जाती है। भारतीय इतिहास में इस समय तक 'भारत छोड़ो आंदोलन' घटित हो चुका था। जिसका प्रभाव विशेष रूप से दिनकर जी पर पड़ा। इक्कीस कविताओं के इस संग्रह में एक कविता 'कलिंग विजय' भी है जिसके संबंध में दिनकर जी कहते हैं कि- इस संग्रह की 'कलिंग विजय नाम्नी कविता, 'कुरुक्षेत्र की पूर्व पीठिका के रूप में लिखी गई थी।"[47] यह इनकी मुक्तक रचना है।

दिनकर ने अपनी कविताओं के माध्यम से युवाओं में विद्रोह की अग्नि प्रज्ज्वलित कर रहे थे। उनकी 'आग की भीख' कविता को पढ़कर

ऐसा महसूस होता है कि उनके मन में देश के उद्धार करने की कितनी उत्तेजना थी। समग्र देश में प्रतिशोध की भावना फैल चुकी थी। दिनकर देश का उद्धार करने को व्याकुल हो जाते हैं-

"हम दे चुके लहू हैं, तू देवता विभा दे,
अपने अनल विशिख से आकाश जगमगा दे,
प्यारे स्वदेश के हित वरदान मांगता हूं,
तेरी दया विपद में भगवान, मांगता हूं।"[48]

इस तरह कवि ने 'जवानी का झंडा' कविता में देश के नौजवानों को विद्रोह के लिए ललकारा है। इसके अतिरिक्त उनकी 'हे मेरे स्वदेश', 'जवानियां', 'जयप्रकाश', 'अंतिम मनुष्य', 'तिमिर में स्वर्ग के बाले दीप आज फिर आता है कोई', 'ओ अशेष ! नि:षेश बीन का एक तार था मैं ही',' वह प्रदीप जो दिख रहा है झिलमिल दूर नहीं है, आदि इस काव्य संग्रह में संकलित कविताएं हैं।

बापू

इसका प्रकाशन 1947 ई. में हुआ। यह लघु ग्रंथ गांधी जी को समर्पित श्रद्धांजलि स्वरूप लिखा गया इसके 4 खंड इस प्रकार हैं-

1 बापू

2 महा बलिदान

3 वज्रपात

4 अघटन घटना, क्या समाधान ?

सावित्री सिन्हा जी कहती हैं "दिनकर गांधी तथा उनके उद्दात्त लक्ष्य की महानता और उच्चता में विश्वास रखते हुए भी उनकी अहिंसा को साधन रूप में कभी स्वीकार नहीं कर पाए थे, परंतु गांधी की नोआखली यात्रा की सफलता से उनके आत्मा की शीतल स्निग्ध किरण दिनकर को भी बेध गई। उनका ओज और आक्रोश भी द्रवित होकर करुणा और श्रद्धा बन गया। पार्थिव जीवन और मनुष्य की परिसीमाओं के कारण 'अंगार' की अनिवार्यता को स्वीकार करते हुए ही उन्होंने गांधी की आध्यात्मिक शक्ति की महत्ता को स्वीकार किया।"[49]

दिनकर जी ने बापू की हत्या के बाद वज्रपात नाम से जो कविता लिखी उसमें तो कवि ने अत्यंत मार्मिक चित्रण किया है-

"यह रूह देश की चली रे
मां की आंखों का नूर चला,
दौड़ो, दौड़ो, तज हमें
हमारा बापू हमसे दूर चला।"[50]

इतिहास के आंसू

इसका प्रकाशन 1951 ई. में हुआ। दिनकर जी की 'इतिहास के आंसू' उनकी ऐतिहासिक कविताओं का संकलन है। कवि भारत के गौरवशाली अतीत का चिंतन करता है। इसमें बुद्ध, अशोक तथा चंद्रगुप्त

का गौरव गान किया गया है। इसमें मगध महिमा, पाटलिपुत्र, मिथिला, वैशाली और राजस्थान की अतीत की गौरवपूर्ण स्मृतियों का गौरव गान किया है। संक्षेप में कह सकते हैं कि कवि भारत के गौरवपूर्ण अतीत की याद दिलाकर विश्व में शांति स्थापित करना चाहता है। इसकी भाषा सरल व ओजपूर्ण है। विचार क्रांतिकारी है।

मिर्च का मजा

इसका प्रकाशन 1955 ई. में हुआ। यह एक बालोपयोगी कविता है।

रश्मिरथी

इसका प्रकाशन 1952 ई. में हुआ। 'रश्मिरथी' एक चरित प्रधान काव्य है, जो सात वर्गों में विभाजित है। इसमें महाभारत से कथानक को लिया गया है। "रश्मिरथी की रचना दलितों और उपेक्षितों के उद्धार के युग में हुई है। 'कर्ण' हजारों वर्षों से हमारे सामने उपेक्षित एवं कलंकित मानवता का मूक प्रतीक बनकर खड़ा रहा है। 'रश्मिरथी' में उसी कलंक की गहरी कालिमा को आलोक में परिवर्तित करने का प्रयास किया गया है। कुल और जाति के अहंकार को मिटाकर मानवीय मूल्यों और गुणों की स्थापना उनका ध्येय है। उच्च अथवा नीच-वंश माता-पिता के गुण दोष-व्यक्ति की योग्यता और शक्ति के प्रतीक नहीं हैं। उसके व्यक्तित्व-मूल्यांकन की सबसे बड़ी कसौटी है। उसकी अपनी क्षमता और अपनी योग्यता।"[51] अतः जाति-पाँति के आधार पर जो भेदभाव सदियों से होता

है। उसी को दिनकर जी ने समाप्त करने का प्रयास किया है और व्यक्तित्त्व के गुणों पर बल देते हुए मानवीय गुणों तथा मानवता की स्थापना की है। यही इसका सार है।

दिल्ली

इसका प्रकाशन 1954 ई. में हुआ। 'दिल्ली' संग्रह में चार कविताओं का संकलन है। वे हैं- 'दिल्ली', 'दिल्ली और मॉस्को', 'हक़ की पुकार', 'भारत का यह रेशमी नगर'। यह सभी कविताएं दिल्ली पर आधारित हैं। यह उस समय की रचना है, जब दिनकर जी कांग्रेस के सदस्य थे। उन्होंने कांग्रेसी शासकों को विलास का त्याग कर दीन-दुखियों की तरफ ध्यान देने को कहा। 'दिल्ली' कविता में उन्होंने जब दिल्ली में प्रवेशोत्सव चल रहा था। तब लाखों रुपए खर्च कर किए जा रहे थे। दूसरी और गरीब लोग सरकारी दमन चक्र और शोषण के शिकार हो रहे थे। उसका वर्णन किया गया है। 'दिल्ली और मास्को' में जब 'भारत छोड़ो आंदोलन' के समय आंदोलनकारियों का साम्यवादी साथ न देने के कारण उनकी कटु आलोचना की है। अन्य दोनों कविताओं में वे सत्ताधारियों का ध्यान अभावहीन जनता की तरफ ले जाने की कोशिश करते हैं।

नीलकुसुम

इसका प्रकाशन 1955 ई. में हुआ। 'नीलकुसुम' का प्रकाशन स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हुआ। इसका अर्थ यह है कि स्वतंत्रता संग्राम और उसके बाद के आंदोलन तथा 1954-55 ई. तक की तत्कालीन परिस्थितियों का प्रभाव कहीं न कहीं इस काव्य-संग्रह पर भी पड़ा। भारत के स्वतंत्र होने के बाद भारत की जनता खुशियाँ मनाती उससे पहले ही उसे शोषण की जंजीर में बंधना पड़ा और समाज में फैली सभी बुराइयों पर दिनकर ने इस काव्य संग्रह के माध्यम से अपनी पैनी दृष्टि डाली और जन्म-मृत्यु, युद्ध-शांति, कल्पना-यथार्थ, हिंसा-अहिंसा का स्वर दिया और ऐसी कविताओं में उनकी 'स्वप्न और सत्य', 'व्याल-विजय', 'नयी आवाज', 'जनतंत्र का जन्म', 'किसको नमन करूं मैं?', 'राष्ट्र-देवता का विसर्जन', 'हिमालय का संदेश' आदि प्रमुख हैं। कवि की ''नींव का हाहाकार' ऐसे ही सामाजिक असंतोष को व्यक्त करती हैं-

"तोड़ दो इसको, महल को पस्त औ' बर्बाद कर दो।
नीव की ईंटे हटाओ।
दब गए हैं जो, अभी तक जी रहे हैं।
जीवितों को इस महल के बोझ से आजाद कर दो।"[52]

संक्षेप में कह सकते हैं, कि नीलकुसुम में वर्तमान अराजकता, भ्रष्टाचार, अव्यवस्था तथा सामाजिक, राजनीतिक और दार्शनिक चेतना से

संबंधित कविताएं संकलित हैं। कुल मिलाकर हम कह सकते हैं, कि उन्होंने मां भारती की वंदना की है।

सूरज का ब्याह

इस काव्य-संग्रह का प्रकाशन 1955 ई. में हुआ। इसमें शिक्षादायक बाल कविताओं का संग्रह है।

चक्रवाल

इसका प्रकाशन 1956 ई. में हुआ। दिनकर जी की 'चक्रवाल' में 'रेणुका', 'हुंकार', 'रसवंती', 'द्वंदगीत', 'सामधेनी', 'कुरुक्षेत्र', 'बापू', 'धूपछांह', 'धूप और धुआं', 'रश्मिरथी', 'नीम के पत्ते', 'दिल्ली' और 'नीलकुसुम' इन सभी काव्य-संग्रहों से ली गई कविता का संकलन है। इसमें कुल 74 कविताएं हैं और इसकी भूमिका कुल 76 पृष्ठों में लिखी गई है। 'चक्रवाल' की भूमिका में दिनकर जी ने रीतिकाल से प्रयोगवाद तक की हिंदी कविता के विकास का बहुत ही सुंदर विवेचन प्रस्तुत किया है। कवि ने इसके माध्यम से अपने काव्यात्मक विकास की जानकारी प्रदान करने के साथ-साथ हिंदी साहित्य के विभिन्न वादों, काव्य की भाषा शैली, नयी कविता का भविष्य, तथा हिंदी काव्य प्रवाह से संबंधित अपने विचार व्यक्त किए हैं। इसकी भूमिका को पढ़कर हम दिनकर जी के काव्य विकास को अच्छी प्रकार समझ सकते हैं।

इनमें संकलित कविताओं में सत्ताधारी नेताओं के भ्रष्टाचार, अत्याचार तथा समाज में व्याप्त असमानता आदि विषय शामिल हैं। इसके अतिरिक्त व्यंग्यात्मक रचनाएं भी दिखाई देती हैं। जैसे- 'भारत का यह रेशमी नगर', दिल्ली पर लिखा गया है। जिसमें तत्कालीन नेताओं के ऊपर व्यंग्य किया गया है।

सीपी और शंख

इसका प्रकाशन 1957 ई. में हुआ। यह एक अनूदित काव्य-संग्रह है। जिसमें 44 कविताएँ संग्रहीत है।

नये सुभाषित

इसका प्रकाशन 1957 ई. में हुआ। अधिकतर कविताओं में दिनकर ने मौलिक भावनाओं का समावेश किया है। इस काव्य संग्रह में लगभग सौ काव्य हैं जिसमें मुख्य हैं- 'प्रेम', 'कविता और प्रेम', 'नर-नारी', 'शिशु और शैशव', 'जवानी और बुढ़ापा', 'जयप्रकाश', 'जवाहर लाल', 'भारत', 'मार्क्स और फ्रायड', 'गाँधी' इत्यादि।

उर्वशी

इसका प्रकाशन 1961 ई. में हुआ। छायावाद के बाद जितने भी प्रबंध काव्य लिखे गए। उसमें 'उर्वशी' शीर्ष स्थान पर है, यह दिनकर जी को 'उर्वशी' के लिए पुरस्कृत किए गए भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार से साबित होता है। 'उर्वशी' गीतिनाट्य पांच अंकों में वर्गीकृत है। प्रथम अंक

में कथा की पूर्वपीठिका, द्वितीय अंक में उसका विकास, तृतीय अंक में कथा चरम सीमा पर, तथा चतुर्थ और पांचवें अंक में कथा का समापन है। 'उर्वशी' मूलत: नारी और नर के रागात्मक संबंधों का विवेचनात्मक काव्य है। इसमें जिस प्रेम का वर्णन किया गया है। वह आध्यात्मिक, सात्विक और सत्य है। "उर्वशी के कथानक के सूत्र वेद, पुराण, महाभारत, भागवत आदि में निहित है, जिनका व्यवस्थित रूप कालिदास के 'विक्रमोर्वशी' में निरूपित है। दिनकर की कृति पर सर्वाधिक प्रभाव 'विक्रमोर्वशी' का ही है। मुख्य कथा के रूप में पुरूरवा और उर्वशी का प्रसिद्ध प्रेम-वर्णन है। जिस अधिकारिक कथा के रूप में माना जा सकता है। अन्य कथाएं यथा-अप्सराओं का कार्य व्यापार, औशीनरी का दु:खी और तिरस्कृत रूप, सुकन्या और च्यवन ऋषि की कथा आदि प्रासंगिक कथानक के रूप में हैं।"[53]

संक्षेप में कह सकते हैं कि कवि ने पुरूरवा और उर्वशी के माध्यम से **श्रृंगार** के कई रूपों का वर्णन किया है तथा उसके साथ-साथ उसके आध्यात्मिक रूप का वर्णन भी देखने को मिलता है। सावित्री सिन्हा के अनुसार "उर्वशी के **श्रृंगार** के तीन विकास सूत्र मिलते हैं- उन्नयनित श्रृंगार, जिसके अंतर्गत औशीनरी की वेदना, त्याग गाम्भीर्य और दायित्व का भाव आता है, सामंजस्यपूर्ण गार्हस्थिक, श्रृंगार, जिसका प्रतिनिधित्व

महर्षि च्यवन और सुकन्या द्वारा होता है, प्रवृत्तिमूलक, भोग प्रधान श्रृंगार जो उर्वशी और पुरूरवा के माध्यम से व्यंजित होता है।"[54]

परशुराम की प्रतीक्षा

इसका प्रकाशन 1963 ई. में हुआ। भारत पर चीन आक्रमण के प्रतिक्रिया स्वरूप 'परशुराम की प्रतीक्षा' की रचना की गयी। यह 18 कविताओं का संकलन जिनमें से पंद्रह नवीन कविताएं हैं और तीन सामधेनी काव्य-संग्रह से ली गई हैं। जिसे दिनकर समय आने पर इस काव्य संग्रह में शामिल करते हैं। दिनकर जी का स्वर पुन: ओजस्वी पूर्ण और क्रांतिपूर्ण दिखाई देता है। यह एक युद्धगीत है जिसमें जन-जागरण की भावना प्रधान है। इसका कारण यह है कि दिनकर आजादी के बाद व्याप्त सामाजिक भ्रष्टाचार, अत्याचार, अन्याय तथा शोषण देश के नौजवानों को देश की रक्षा के लिए प्रेरित करने का प्रयास करते हैं। जहां परशुराम 'भारत भाग्य पुरुष' का प्रतीक है-

"गाओ कवियों! जयगान, कल्पना तानो,
आ रहा देवता जो उसको पहचानो।
है एक हाथ में परशु, एक में कुश है,
आ रहा नए भारत का भाग्य पुरुष है।"[55]

आत्मा की आँखें

इसका प्रकाशन 1964 ई. में हुआ। यह एक अनूदित काव्य-संग्रह है। इसके मूल रचनाकार डी. एच. लारेंस हैं।

कोयला और कवित्त्व

इसका प्रकाशन 1964 ई. में हुआ। यह 40 कविताओं का संग्रह है। जिसमें सबसे बड़ी कविता कोयला और कवित्त्व है, इसीलिए इसका नाम कोयला और कवित्त्व है। इसमें कवि कला और धर्म दोनों में सामंजस्य स्थापित करते हैं।

हारे को हरिनाम

इसका प्रकाशन 1970 ई. में हुआ। यह कवि का अंतिम काव्य-संग्रह है। जो संवेदनाओं से युक्त है, जिसमे कवि ने ईश्वर, आत्मा और मानव प्रेम युक्त संवेदनाओं की अभिव्यक्ति की है।

गद्य रचनाएं

मिट्टी की ओर

इसका प्रकाशन 1946 ई. में हुआ। 'मिट्टी की ओर' दिनकर जी की आलोचनात्मक कृति है। जिसमें चौदह निबंधों का संग्रह है। दिनकर जी कहते हैं, 'मिट्टी की ओर' कृति का नाम "हमारे सामने की हिंदी-कविता' रखने का विचार था, लेकिन, अतिव्याप्ति के दोष से बचने के लिए इस

नाम का मोह छोड़ देना पड़ा क्योंकि इस छोटी-सी पुस्तक में हमारे सामने की संपूर्ण हिंदी कविता का सांगोपांग विवेचन नहीं किया गया है। इसमें तो केवल उन्हीं निबंधों का संग्रह है जो छायावाद की कुहेलिका से निकलकर प्रसन्न आलोक के देश की ओर बढ़ने वाली हिंदी-कविता को लक्ष्य करके लिखे गए हैं। मेरे जानते वर्तमान कविता की यही धारा प्रमुख है और इसी का आश्रय लेकर हिंदी-कविता अपना विकास कर रही है।"[56]

इसमें इतिहास के दृष्टिकोण से, 'दृश्य और अदृश्य का सेतु', 'कला में सोद्देश्यता का प्रश्न', 'वर्तमान कविता की प्रेरक शक्तियां', 'समकालीन सत्य से कविता का वियोग', 'हिंदी कविता और छंद प्रगतिवाद', 'समकालीनता की व्याख्या', 'काव्य-समीक्षा का दिशा-निर्देश साहित्य और राजनीति', 'खड़ी बोली का प्रतिनिधि कवि', 'बलिशाला ही हो मधुशाला', 'कवि श्री सियारामशरण गुप्त', 'तुम घर कब आओगे कवि ?' इन निबंधों का संग्रह है।

अर्धनारीश्वर

इसका प्रकाशन 1952 ई. में हुआ। यह दिनकर जी का दूसरा निबंध संग्रह है। दिनकर जी कहते हैं इस संग्रह में ऐसे निबंध हैं, " जो मन-बहलाव में लिखे जाने के कारण कविता की चौहद्दी के पास पड़ते हैं

और कुछ ऐसे भी हैं जिनमें बौद्धिक चिंतन और विश्लेषण प्रधान है। इसलिए मैंने इस संग्रह का नाम अर्धनारीश्वर रखा है।"[57]

राष्ट्रभाषा और राष्ट्रीय एकता

इसका प्रकाशन 1955 ई. में हुआ। इस निबंध संग्रह में भाषा तथा संस्कृति से संबंधित निबंध हैं।

हमारी सांस्कृतिक एकता

इसका प्रकाशन 1955 ई. में हुआ। यह 9 निबंधों का काव्य संग्रह है। इसमें भारत की राष्ट्रीय एकता पर बल दिया गया है।

संस्कृति के चार अध्याय

इसका प्रकाशन 1956 ई. में हुआ। इस ग्रंथ के लिए दिनकर जी को 1956 ई. में साहित्य अकादमी राष्ट्रीय पुरस्कार प्रदान किया गया था। इसकी भूमिका पंडित जवाहरलाल नेहरू ने लिखी थी। इसमें दिनकर जी ने राष्ट्रीय-संस्कृति का विवरण प्रस्तुत किया है। यह कृति चार मुख्य अध्यायों में विभाजित की गई है। मुख्य अध्याय इस प्रकार हैं-

1. भारतीय जनता की रचना और हिंदू-संस्कृति का आविर्भाव

2. प्राचीन हिंदुत्व से विद्रोह

3. हिंदू संस्कृति और इस्लाम

4. भारतीय संस्कृति और यूरोप

दिनकर जी ने गद्य साहित्य के अंतर्गत अन्य जिन कृतियों की रचना की वे इस प्रकार हैं-'रेती के फूल(1954)', 'उजली आग(1956)', 'वेणुवन(1958)', 'वटपीपल(1961)', 'राष्ट्रभाषा आन्दोलन और गांधीजी(1968)', 'धर्म, नैतिकता और विज्ञान(1969)', 'भारतीय एकता(1971)', 'विवाह की मुसीबतें(1973)', 'दिनकर की डायरी(1973)' इत्यादि। उनकी आलोचनात्मक कृतियाँ हैं- 'काव्य की भूमिका(1958)', 'शुद्ध कविता की खोज(1966)', 'पंत, प्रसाद और मैथिलीशरण गुप्त'। संस्मरणात्मक कृतियों में दिनकर ने 'लोकदेव नेहरु(1965)', 'संस्मरण और श्रद्धांजलियाँ(1970)' की रचना की। वहीं 'देश-विदेश(1957)' और 'मेरी यात्राएं(1971)' कवि की यात्रा-विवरण सम्बन्धी रचनाएं हैं।

इस प्रकार हमने देखा कि रामधारी सिंह 'दिनकर' के जीवन, व्यक्तित्त्व और कृतित्व के अवलोकन के बाद यह निष्कर्ष निकलता है कि वे न केवल कवि थे, बल्कि कहानीकार, निबंधकार, आलोचनाकार, गद्यकार एवं अत्यंत महत्वपूर्ण एक राष्ट्रकवि भी थे। इनके जीवन में अनेक उतार-चढ़ाव आए परंतु फिर भी उन्होंने लेखनी बंद नहीं की। उनकी कृतियाँ उनके जीवन में घटित घटनाओं का अनुभव का परिणाम थीं। उनका व्यक्तित्व उनके कृतित्व में समग्र प्रतिबिंबित होता दिखाई देता है। चाहे वह क्रांतिकारी हो, कोमल हो, ओजस्वी हो, विद्रोही हो, रहस्यवादी हो या फिर दार्शनिक। दिनकर एक बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे।

सन्दर्भ ग्रंथ-सूची

1. गुप्त मन्मथनाथ, आज के लोकप्रिय हिंदी कवि, राजकमल एंड सन्ज, दिल्ली, सातवा सं-1978 पृ. सं. - 13
2. अनुपमा, दिनकर के काव्य में सांस्कृतिक चेतना, एस कुमार एंड कम्पनी, नई दिल्ली, सं.-2015,पृ. सं.-10
3. शर्मा कृष्णदेव एवं अग्रवाल माया, उर्वशी एक विवेचन, अनिता प्रकाशन, दिल्ली, नवीनतम सं.,पृ. सं.-01
4. तिवारी यतीन्द्र, दिनकर की काव्यभाषा, पुस्तक संस्थान, कानपुर, प्र. सं.-1976, पृ. सं.- 43
5. जैन शेखरचंद्र, राष्ट्रीय कवि दिनकर और उनकी काव्यकला, जयपुर पुस्तक सदन, जयपुर, प्र. सं.-1973, पृ. सं.- 06
6. चन्द्र गिरीश, रामधारी सिंह दिनकर का काव्य एक अनुशीलन, साधना प्रकाशन, कानपुर, प्र. सं.-2010, पृ. सं.-17
7. सिन्हा सावित्री, युगचारण दिनकर, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्र. सं.-1963, पृ. सं.-01
8. सिन्हा सावित्री, युगचारण दिनकर, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्र. सं.-1963, पृ. सं.-02-03
9. दिनकर रामधारी, रसवंती, उदयाचल, पटना, चतुर्थ सं., पृ. सं.-43

10. तिवारी यतीन्द्र, दिनकर की काव्यभाषा, पुस्तक संस्थान, कानपुर, प्र. सं.-1976, पृ. सं.-44
11. दिनकर रामधारी सिंह, रेणुका, उदयाचल, पटना, पृ. सं.-62
12. तिवारी यतीन्द्र, दिनकर की काव्यभाषा, पुस्तक संस्थान, कानपुर, प्र. सं.-1976, पृ. सं.-14
13. गुप्त मन्मथनाथ, आज के लोकप्रिय हिंदी कवि, राजकमल एंड सन्ज, दिल्ली, सातवा सं-1978 पृ. सं.- 15
14. सिन्हा सावित्री, युगचारण दिनकर, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्र. सं.-1963, पृ. सं.-05
15. सिन्हा सावित्री, युगचारण दिनकर, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्र. सं.-1963, पृ. सं.-06
16. अनुपमा, दिनकर के काव्य में सांस्कृतिक चेतना, एस कुमार एंड कम्पनी, नई दिल्ली, सं.-2015,पृ. सं.-12
17. सिन्हा सावित्री, युगचारण दिनकर, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्र. सं.-1963, पृ. सं.-08
18. सिन्हा सावित्री, युगचारण दिनकर, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्र. सं.-1963, पृ. सं.-09
19. गुप्त मन्मथनाथ, आज के लोकप्रिय हिंदी कवि, राजकमल एंड सन्ज, दिल्ली, सातवा सं-1978 पृ. सं.- 11

20. aajtak.intoday.in/story/revolutionary-poet-ramdhari-sing-dinkar-1-54996.html
21. गुप्त मन्मथनाथ, आज के लोकप्रिय हिंदी कवि, राजकमल एंड सन्ज, दिल्ली, सातवा सं-1978 पृ. सं.- 17
22. सिन्हा सावित्री, युगचारण दिनकर, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्र. सं.-1963, पृ. सं.-47
23. गुप्त मन्मथनाथ, आज के लोकप्रिय हिंदी कवि, राजकमल एंड सन्ज, दिल्ली, सातवा सं-1978 पृ. सं.- 14
24. सिन्हा सावित्री, युगचारण दिनकर, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्र. सं.-1963, पृ. सं.-21
25. गुप्त मन्मथनाथ, आज के लोकप्रिय हिंदी कवि, राजकमल एंड सन्ज, दिल्ली, सातवा सं-1978 पृ. सं.-07
26. सिन्हा सावित्री, युगचारण दिनकर, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्र. सं.-1963, पृ. सं.-21
27. सिन्हा सावित्री, युगचारण दिनकर, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्र. सं.-1963, पृ. सं.-22
28. गुप्त मन्मथनाथ, आज के लोकप्रिय हिंदी कवि, राजकमल एंड सन्ज, दिल्ली, सातवा सं-1978 पृ. सं.-03
29. जैन शेखरचंद्र, राष्ट्रीय कवि दिनकर और उनकी काव्यकला, जयपुर पुस्तक सदन, जयपुर, प्र. सं.-1973, पृ. सं.-49

30. गुप्त मन्मथनाथ, आज के लोकप्रिय हिंदी कवि, राजकमल एंड सन्ज, दिल्ली, सातवा सं-1978 पृ. सं.-04
31. सिन्हा सावित्री, युगचारण दिनकर, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्र. सं.-1963, पृ. सं.-24
32. सिन्हा सावित्री, युगचारण दिनकर, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्र. सं.-1963, पृ. सं.-25
33. सिन्हा सावित्री, युगचारण दिनकर, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्र. सं.-1963, पृ. सं.-25
34. दिनकर रामधारी सिंह, चक्रवाल, उदयाचल, पटना, प्र. सं.-1956, पृ. सं.-33
35. गुप्त मन्मथनाथ, आज के लोकप्रिय हिंदी कवि, राजकमल एंड सन्ज, दिल्ली, सातवा सं-1978 पृ. सं.-25
36. दिनकर रामधारी सिंह, रेणुका, उदयाचल, पटना, पृ. सं.-31
37. दिनकर रामधारी सिंह, रेणुका, उदयाचल, पटना, पृ. सं.-05
38. संपादक-सावित्री सिन्हा, दिनकर, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, चौथी आवृति-1998, नई दिल्ली, पृ. सं.-106
39. परमार सरला, दिनकर की काव्यभाषा: शैलीविज्ञान अध्ययन, संस्कृति प्रकाशन, अहमदाबाद, द्वि.,सं.-1991,पृ. सं.-28
40. दिनकर रामधारी, रसवंती, उदयाचल, पटना, चतुर्थ सं., पृ. सं.-01
41. दिनकर रामधारी, रसवंती, उदयाचल, पटना, चतुर्थ सं., पृ. सं.-03

42. दिनकर रामधारी, रसवंती, उदयाचल, पटना, चतुर्थ सं., पृ. सं.-01
43. जैन शेखरचंद्र, राष्ट्रीय कवि दिनकर और उनकी काव्यकला, जयपुर पुस्तक सदन, जयपुर, प्र. सं.-1973, पृ. सं.-68
44. दिनकर रामधारी, द्वंदगीत (इतिहास), उदयाचल, पटना, चतुर्थ सं., पृ. सं.-04
45. दिनकर रामधारी, द्वंदगीत, उदयाचल, पटना, चतुर्थ सं., पृ. सं.-19
46. जैन शेखरचंद्र, राष्ट्रीय कवि दिनकर और उनकी काव्यकला, जयपुर पुस्तक सदन, जयपुर, प्र. सं.-1973, पृ. सं.-72
47. दिनकर रामधारी सिंह, सामधेनी(दो शब्द), उदयाचल, पटना, द्वि, सं.-1949
48. दिनकर रामधारी सिंह, सामधेनी, उदयाचल, पटना, द्वि, सं.-1949, पृ. सं.-58
49. सिन्हा सावित्री, युगचारण दिनकर, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्र. सं.-1963, पृ. सं.-142
50. दिनकर रामधारी, बापू, उदयाचल, पटना, द्वि., सं.-1948, पृ. सं.-41
51. सिन्हा सावित्री, युगचारण दिनकर, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्र. सं.-1963, पृ. सं.-146
52. दिनकर रामधारी सिंह, नीलकुसुम, उदयाचल, पटना, प्र. सं.-1954, पृ. सं.-72

53. जैन शेखरचंद्र, राष्ट्रीय कवि दिनकर और उनकी काव्यकला, जयपुर पुस्तक सदन, जयपुर, प्र. सं.-1973, पृ. सं.-99

54. सिन्हा सावित्री, युगचारण दिनकर, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्र. सं.-1963, पृ. सं.-210

55. दिनकर रामधारी सिंह, परशुराम की प्रतीक्षा, उदयाचल, पटना, द्वि., सं.-1965, पृ. सं.-20

56. दिनकर रामधारी सिंह, मिट्टी की ओर, (निवेदन से), उदयाचल, पटना, द्वि, सं.-1949

57. दिनकर रामधारी सिंह, अर्धनारीश्वर(आमुख से), जनवाणी प्रकाशन, कलकत्ता, प्र. सं.